विद्यालय के प्रशासन एवं प्रबंधन में प्रधानाचार्य की भूमिका

विनोद कुमार*
गोपाल कृष्ण ठाकुर**

उच्चतर माध्यमिक विद्यालयी शिक्षा का समय विद्यार्थियों के सामान्य विद्यालयी अनुभव एवं विशिष्ट ज्ञान आधारित उच्च शिक्षा का संधि काल होता है। यह विद्यार्थियों की औपचारिक शिक्षा का वह चरण होता है जिसमें विद्यार्थियों के भावी जीवन की आधारशिला रखी जाती है तथा वे अपने भावी वृत्तिक-पथ का चुनाव करने हेतु सही मायने में उच्चतर माध्यमिक विद्यालयी शिक्षा, विद्यार्थियों के व्यक्तित्व, ज्ञान, कौशल एवं मूल्यों को सुनिश्चित आकार प्रदान करने का कार्य करती है। ऐसे में, विद्यार्थियों के समग्र विकास में, उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। भारत में विद्यालयी प्रबंधन की प्रकृति एवं स्वरूप में अत्यधिक विविधता है। एक ओर जहाँ सरकारी विद्यालय पर्याप्त संख्या में हैं, वहीं निजी प्रबंधन या स्ववित्त पोषित विद्यालयों की संख्या भी पिछले कुछ दशकों में बढ़ी है। बच्चों की शिक्षा निजी विद्यालयों में कराने हेतु अभिभावकों का रुझान भी हाल के वर्षों में काफ़ी बढ़ा है। सरकारी विद्यालयों से विमुख होकर स्ववित्त पोषित विद्यालयों की ओर रुझान होने का एक स्पष्ट कारण यह हो सकता है कि इन विद्यालयों में सुदृढ़ प्रशासन एवं प्रबंधन तंत्र है, जिसके सफल संचालन की ज़िम्मेदारी प्रधानाचार्य की होती है। ऐसे में यह अध्ययन करना रोचक होने के साथ-साथ शोध का विषय भी है कि एक प्रधानाचार्य, विद्यार्थियों की अकादमिक आवश्यकताओं को पूरा करते हुए, शिक्षकों, प्रबंधकों और अभिभावकों के मध्य सामंजस्य कैसे स्थापित करता है। विषय-वस्तु विश्लेषण विधि का प्रयोग करते हुए, उपलब्ध साहित्य के समुचित विश्लेषण पर आधारित इस शोध पत्र का केंद्रीय सरोकार स्ववित्त पोषित उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के संदर्भ में दैनंदिन विद्यालयी क्रियाकलाप एवं नीतिगत परिप्रेक्ष्य में प्रधानाचार्य की विभिन्न भूमिकाओं का विवरणात्मक संदर्भ प्रस्तुत करना है।

शैक्षिक प्रशासन एवं प्रबंधन एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें औपचारिक शिक्षा से संबंधित समस्त क्रियाकलापों के नीति-निर्माण से लेकर, योजनाओं के क्रियान्वयन को शामिल किया जाता है। वास्तव में, एक बच्चे के घर से विद्यालय जाने हेतु तैयार होने के पहले से लेकर, विद्यालय से बाहर निकलकर अपने सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन में वह कैसा व्यवहार करेगा तथा उस व्यवहार से किस प्रकार समाज और देश को एक नई दिशा प्रदान करेगा, की तैयारी तक की समस्त क्रियाएँ शैक्षिक प्रशासन का अंग होती हैं। इसी विचार को ब्रुक एडम्स ने व्यक्त करते हुए कहा है कि, "शिक्षा प्रशासन में अनेक को

* *शोधार्थी*, शिक्षा विभाग, शिक्षा विद्यापीठ, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र 442001
** *प्रोफ़ेसर एवं विभागाध्यक्ष*, शिक्षा विभाग, शिक्षा विद्यापीठ, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र 442001

© NCERT not to be republished

एक सूत्र में बांधने की क्षमता होती है। यह परस्पर विरोधियों तथा सामाजिक शक्तियों को इस प्रकार जोड़ता है कि सब एक इकाई के रूप में कार्य करते हैं" (सिंह और राय, 2015)। एक अच्छी शैक्षिक प्रशासनिक व्यवस्था शिक्षार्थी को भावी नागरिक बनाने में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती है, जिससे विद्यार्थी देशकाल और परिस्थिति में सामंजस्य स्थापित करते हुए अपना विकास करता है। इस प्रकार देखा जाए तो शैक्षिक प्रशासन केवल विद्यालय जीवन का प्रशासन नहीं है, बल्कि यह संपूर्ण मानव जीवन का प्रशासन है। क्योंकि हम अपने बच्चों के लिए जितनी अच्छी शिक्षा व्यवस्था प्रदान करेंगे, वे विद्यालय से निकलकर समाज और राष्ट्र-निर्माण में उतना ही अच्छा योगदान दे सकेंगे।

शैक्षिक-प्रशासन अन्य प्रकार के संगठनों के प्रशासन से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। यह केवल विद्यालयी प्रशासन नहीं है, बल्कि यह विद्यार्थियों के सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन और राष्ट्र-निर्माण का प्रशासन भी है। शैक्षिक प्रशासन और शैक्षिक प्रबंधन एक-दूसरे में बहुत घनिष्ठता के साथ समाहित हैं। लेकिन दोनों में मौलिक अंतर भी होता है। दोनों के कार्य-क्षेत्र अलग-अलग हैं। शिक्षा प्रशासन में संगठन के उद्देश्य निर्धारण से लेकर, उनकी प्राप्ति हेतु नीति-निर्धारण और क्रियान्वयन किया जाता है तथा शैक्षिक प्रबंधन लक्ष्यों-उद्देश्यों की पूर्ति हेतु भौतिक एवं मानवीय संसाधनों की व्यवस्था और उनमें समन्वय का कार्य करता है (वर्मा, 2013)। *इनसाइक्लोपीडिया ऑफ़ एजुकेशनल रिसर्च* में शैक्षिक प्रशासन के बारे में कहा गया है कि, "शैक्षिक प्रशासन एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके द्वारा संबंधित व्यक्तियों के प्रयासों का एकीकरण तथा उचित सामग्री का उपयोग इस प्रकार किया जाता है जिससे मानवीय गुणों का समुचित विकास हो सके।"

शैक्षिक प्रशासन के सुव्यवस्थित संचालन के ध्येय को दृष्टिगत रखते हुए, भारत में "शिक्षा आयोग (1964–66) के सुझाव पर राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1968 के माध्यम से पहली बार भारत सरकार ने पूरे देश में एक नई शिक्षा संरचना (10+2+3) लागू करने पर बल दिया" (लाल और कान्त, 2013)। यद्यपि केंद्र सरकार के स्तर पर शैक्षिक प्रशासन की संरचना में बदलाव के बावजूद, प्रारंभ में पूरे देश में इसे लागू नहीं किया जा सका था। तथापि कालांतर में "राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 के माध्यम से पूरे देश में एक समान शिक्षा संरचना 10+2+3 को अनिवार्य रूप से लागू किया गया" (लाल और कान्त, 2013)। उक्त संरचना के आधार पर वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था प्राथमिक (प्रथम पाँच वर्ष की शिक्षा), उच्च प्राथमिक (6 से 8 वर्ष तक की शिक्षा), माध्यमिक (9 से 10 वर्ष तक की शिक्षा), उच्चतर माध्यमिक (10+2 अर्थात् 11 से 12 वर्ष तक की शिक्षा) तथा उच्च शिक्षा (उच्चतर माध्यमिक के बाद की संपूर्ण शिक्षा) के रूप में संचालित है। उच्चतर माध्यमिक स्तर (10+2) पर विद्यालयों में प्रवेशित लगभग समस्त विद्यार्थी किशोरावस्था में होते हैं। उनमें अपार ऊर्जा होती है, जिसे सही दिशा प्रदान करना बहुत आवश्यक होता है। क्योंकि यदि इस स्तर पर उन्हें सही शैक्षिक वातावरण और मार्गदर्शन मिल गया तो वे राष्ट्र-निर्माण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकेंगे। लेकिन यह तभी संभव है, जब उनके विद्यालय की बागडोर एक सफल और श्रेष्ठ नेतृत्वकर्ता, जिसे हम सभी प्रधानाचार्य के रूप में जानते हैं, के हाथ में हो।

© NCERT not to be republished

प्रधानाचार्य, विद्यालय के विभिन्न अंगों को एकीकरण के सूत्र में बाँधकर रखने वाला वह माध्यम है जो विद्यालय रूपी संस्था में संतुलन बनाए रखता है तथा साथ ही इस बात की चेष्टा भी करता है कि विद्यालय एवं उसके सभी कर्मियों का शांतिपूर्वक व सर्वांगीण विकास होता रहे। प्रधानाचार्य ही विद्यालय की गति का निर्धारक होता है और वही उन परंपराओं को, जो समय के साथ-साथ विकसित होती हैं, एक निश्चित रूप देने वाला मुख्य शक्ति का केंद्र भी होता है। इसी तथ्य को पी. सी. रेन ने अपने शब्दों में इस प्रकार अभिव्यक्त किया है कि जहाज़ में जो स्थान इंजन का होता है, वही स्थान विद्यालय में प्रधानाचार्य का होता है। बहुत कम व्यक्ति प्रधानाचार्य की अपेक्षा, उच्च कर्त्तव्यों और उत्तरदायित्वों को धारण करते हैं। विद्यालय का चरित्र प्रधानाचार्य के चरित्र को ही प्रतिबिंबित करता है। वह मोहर के समान है और स्कूल लाख के समान है, वह संगठनकर्ता, नेता, कार्य निर्देशक, संयोजक, अध्यक्ष, अध्यापक, दार्शनिक, अभिभावक और मित्र भी है।

समाज में विद्यालय की अच्छी स्थिति बहुत कुछ उस प्रभाव पर निर्भर है जो प्रधानाचार्य अपने सहकर्मी अध्यापकों के साथ मिलकर विद्यार्थियों और उनके अभिभावकों तथा समाज के ऊपर डालते हैं। विद्यालयी प्रशासन एवं प्रबंधन की सभी क्रियाओं यथा—पाठ्यक्रम क्रियान्वयन, शिक्षकों में टीम भावना उत्पन्न करना, विधियों-प्रविधियों के चयन, वित्त, भौतिक संसाधन, सहायक क्रियाओं और शिक्षण सहायक सामग्री आदि की व्यवस्था भी प्रधानाचार्य ही करता है। इसीलिए पॉल वर्गीज़ ने प्रधानाचार्य को "विद्यालय संगठन की मेहराब में शिक्षा का पत्थर कहा है" (सिंह और राय, 2015)। किसी विद्यालय के सदस्यों की कार्यकुशलता, गुणवत्ता, विद्यालय का स्तर और वातावरण आदि प्रधानाचार्य के व्यक्तित्व, कार्य-कौशल और नेतृत्व व्यवहार पर निर्भर करता है। विद्यालय का उच्च शैक्षिक माहौल, अनुशासन, व्यवस्था और प्रबंधन आदि प्रधानाचार्य के नेतृत्व कुशलता का ही परिणाम होता है। इसीलिए डब्ल्यू. एम. रायबर्न ने कहा है कि, "विद्यालय में प्रधानाचार्य का स्थान उतना ही महत्वपूर्ण है जितना एक जहाज़ में कप्तान का है।" विद्यालयी व्यवस्था का कोई भी ऐसा भाग नहीं है, जहां प्रधानाचार्य के व्यक्तित्व का प्रभाव न पड़ता हो" (सिंह और राय, 2015, पृष्ठ 26)। इसीलिए तो विद्यालय की सफलता और असफलता दोनों को प्रधानाचार्य से जोड़कर देखा जाता है। जिस प्रकार एक टीम की हार और जीत को उसके कप्तान के द्वारा लिए गए निर्णयों से जोड़कर देखा जाता है, उसी प्रकार एक निजी विद्यालय की सफलता और असफलता को भी उसके प्रधानाचार्य द्वारा लिए गए निर्णयों से जोड़कर देखा जाता है। इसी बात को बिल फ्रेंच ने इस प्रकार कहा है कि, "यदि अध्यापक असफल होता है या यदि अध्यापक सफल होता है तो दोनों ही स्थितियों में प्रधानाचार्य ज़िम्मेदार होता है। अर्थात् अध्यापक के सफल होने पर प्रधानाचार्य भी सफल और अध्यापक के असफल होने पर प्रधानाचार्य भी असफल होता है" (सिंह और राय, 2015)।

प्रधानाचार्य संस्था के समस्त अवयवों में समन्वय स्थापित करता है और समूची संस्था के संतुलित विकास को सुनिश्चित बनाता है। वह स्कूल का स्वरूप स्थापित करता है। प्रधानाचार्य ही उन परंपराओं को स्थापित करने का सशक्त साधन है जो समय के साथ और विकसित होती रहती हैं।

© NCERT not to be republished

भारतीय स्कूलों के प्रशासन में प्रधानाचार्य सबसे टिकाऊ और महत्वपूर्ण पदों में से एक है। हालाँकि स्कूल और स्कूल व्यवस्था के आकार और स्थान में भिन्नताएँ होती हैं। प्रधानाचार्यों के अनुभवात्मक पृष्ठभूमि में अंतर, बच्चों के सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों में बदलाव के फलस्वरूप भी होता है। प्रधानाचार्य, विद्यालयी प्रशासक के रूप में सबसे ज़्यादा स्कूल के दैनंदिन संचालन से जुड़ा हुआ होता है। वह पाठ्यक्रम के कार्यान्वयन के साथ ही साथ समुदाय के साथ भी अपना संपर्क व समन्वय स्थापित करता है। केंद्रीय शिक्षा परामर्श बोर्ड ने कहा है कि शिक्षा संस्था की किसी भी योजना का तब तक वांछित परिणाम नहीं निकल सकता, जब तक उसका प्रशासन कुशल और योग्य हाथों में ना हो। अतः यह बात सिद्ध होती है कि शैक्षिक प्रशासन का ज़मीनी स्तर पर क्रियान्वयन करने-कराने वाला प्रधानाचार्य ही होता है, वह विद्यालय का प्रस्तुतकर्ता भी होता है और विद्यालय में दैनिक क्रियाकलापों का ज़िम्मेदार भी होता है।

भारत में स्ववित्त पोषित उच्चतर माध्यमिक विद्यालय

भारत एक गणराज्य है, जिसमें कुल 29 राज्य एवं 07 केंद्र शासित प्रदेश हैं। समूचे देश में एक जैसी शिक्षा संरचना (10+2+3) पाई जाती है। माध्यमिक स्तर (10+2) तक की शिक्षा, विद्यार्थियों को विभिन्न शिक्षा बोर्डों यथा— सी.बी.एस.ई., आई.सी.एस.ई. एवं विभिन्न राज्य बोर्ड आदि से संबद्ध विद्यालयों के माध्यम से दी जाती है। प्रबंधन एवं वित्त के आधार पर, इनमें से कुछ सरकारी, कुछ अर्द्ध सरकारी और कुछ स्ववित्त पोषित विद्यालय होते हैं। स्ववित्त पोषित विद्यालयों की श्रेणी में ऐसे निजी विद्यालय आते हैं, जो किसी-न-किसी बोर्ड से मान्यता प्राप्त अवश्य होते हैं। लेकिन इनका संचालन किसी व्यक्ति या ट्रस्ट द्वारा व्यक्तिगत रूप से किया जाता है। ऐसे विद्यालयों में अध्यापकों एवं अन्य कर्मचारियों की नियुक्ति तथा वेतन की ज़िम्मेदारी भी स्वयं प्रबंध तंत्र की होती है। प्रबंधक विद्यालय के सफल संचालन हेतु प्रधानाचार्य की नियुक्ति करता है। प्रधानाचार्य ही अपने नेतृत्व कौशल एवं प्रशासनिक दक्षता के आधार पर विद्यालय को संचालित करता है।

सैद्धांतिक रूप से प्रधानाचार्य अपने दैनंदिन क्रियाकलापों के सफल संचालन में विद्यालय के सभी संबंधित व्यक्तियों—विद्यार्थी, शिक्षक एवं अन्य कर्मचारियों को न केवल प्रशासनिक नेतृत्व, बल्कि शैक्षिक नेतृत्व प्रदान करता है, विद्यालय प्रबंधन, परामर्शदाता एवं समस्या के समाधानकर्ता के रूप में भी प्रधानाचार्य की अग्रणी भूमिका होती है। प्रधानाचार्य की विभिन्न ज़िम्मेदारी एवं उत्तरदायित्व का विवरण अग्रलिखित है—

प्रधानाचार्य—शैक्षिक नियोजक के रूप में

नियोजन, एक प्रकार का प्रासंगिक पूर्वाभास या समस्या-समाधान करने की प्रक्रिया है। इसे संस्था के लिए तात्कालिक एवं भावी लक्ष्यों तथा उद्देश्यों को निर्धारित करने के साधन के रूप में भी जाना जाता है। सामान्यतः उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यालयों सहित अन्य सभी प्रकार के विद्यालयों में प्रधानाचार्य का दायित्व होता है कि वे अपने विद्यालय के लिए एक निश्चित लक्ष्य का निर्धारण करने के बाद, उस लक्ष्य तक पहुँचने की एक सुनियोजित योजना तैयार करें। एक अच्छी और सुनियोजित योजना में कब,

© NCERT not to be republished

क्या, कैसे और किसके द्वारा किया जाएगा, इसका विस्तृत विवरण होना अपेक्षित होता है अर्थात् यह भविष्य की ओर ध्यान देते हुए कार्य प्रारंभ होने से पहले बनाई गई योजना होती है, जिसके आधार पर प्रधानाचार्य अपने समस्त विद्यालयी क्रियाकलापों को सुचारु रूप से संपन्न करते हैं। वास्तव में, "नियोजन औपचारिक एवं विवेकपूर्ण क्रियाओं का एक समुच्चय है, जिसके द्वारा भविष्य में आने वाली स्थितियों, दशाओं और चुनौतियों का पूर्वाभास करने का प्रयास किया जाता है, जिससे कर्मचारियों तथा संस्था को अधिक प्रभावशाली ढंग से कार्य करने तथा इष्टतम साधनों के द्वारा संबंधित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए तत्पर बनाया जा सके" (नेजविच, 1984)। प्रधानाचार्य एक नियोजनकर्ता के रूप में विद्यालय के दैनंदिन कार्य-प्रणाली के लिए योजना बनाते हैं तथा उसके अनुसार ही समस्त क्रियाकलापों का क्रियान्वयन होता है। अतः विद्यालयों में शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया के सफल संचालन हेतु शैक्षिक आयोजन बहुत ज़रूरी है। शैक्षिक नियोजन की आवश्यकता के कुछ विशेष कारणों का उल्लेख भटनागर और अग्रवाल (1988, पृष्ठ 174–175) ने इस प्रकार किया है—

- नियोजन संगठन की सफलता को सुनिश्चित करता है।
- प्रभावशाली नियोजन के द्वारा समय, श्रम और धन की बचत होती है।
- नियोजन से समस्या-समाधान में त्रुटि कम हो जाती है।
- नियोजन समय के साथ चलने के लिए आवश्यक है।

स्ववित्त पोषित उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के शैक्षिक आयोजन के निर्माण में प्रधानाचार्य को अपने साथ विद्यालय के समस्त स्टाफ़ को शामिल करना चाहिए ताकि सभी लोग मिलकर अपने-अपने अनुभव के हिसाब से व्यक्तिगत उद्देश्यों को संस्था के उद्देश्य के साथ समायोजित करते हुए एक श्रेष्ठ योजना का निर्माण कर सकें। यदि प्रधानाचार्य अकेले ही योजना का निर्माण करेगा तो मुमकिन है कि उसके क्रियान्वयन में अध्यापकों एवं अन्य स्टाफ़ का उतना सहयोग न मिले, जितना कि उन सभी को शामिल करने के बाद बनाई गई योजना के क्रियान्वयन में मिलता है।

प्रधानाचार्य—विद्यालयी नेतृत्वकर्ता

प्रधानाचार्य अपने विद्यालयी संगठन (शैक्षणिक और गैर-शैक्षणिक स्टाफ़) का मुख्य नेतृत्वकर्ता होता है। वह समस्त मानवीय संसाधनों को एक साथ लेकर एक टीम (विद्यालय-स्टाफ़) का निर्माण करता है। संगठन (विद्यालय) के लिए निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु अपनी टीम का संचालन एवं मार्गदर्शन करता है, जिसे हम नेतृत्व कहते हैं। "समान लक्ष्यों की प्राप्ति में व्यक्तियों को अनुगमन करने के लिए प्रभावित करना नेतृत्व है" (कुन्त्ज और डोनेल, 1959)। वास्तव में, नेतृत्व एक कार्य-व्यवहार है, जो अपने अनुयायियों और अधीनस्थों को संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु प्रभावित करता है। कुछ इसी तरह जार्ज आर. टेरी (1954) ने नेतृत्व को परिभाषित करते हुए कहा है कि, "नेतृत्व एक ऐसी क्रिया है जो व्यक्तियों को इस प्रकार प्रभावित करे कि वे अपनी इच्छा से सामूहिक उद्देश्यों के लिए प्रयास करें।" किसी भी संगठन की स्थिति हमेशा एक

© NCERT not to be republished

समान नहीं रहती है। कभी-कभी परिस्थितियाँ बदल जाती हैं। ऐसी स्थिति में नेतृत्वकर्ता की ज़िम्मेदारी अधिक बड़ी हो जाती है, तब वह उस परिस्थिति से निपटने हेतु विशेष रणनीति बनाता है, जिसे हम सभी परिस्थितिजन्य नेतृत्व कहते हैं। जैसा कि टेननबाम, रॉबर्ट (1959) ने कहा है कि, "नेतृत्व एक परिस्थिति में प्रयुक्त किया गया तथा विशिष्ट लक्ष्य की प्राप्ति की ओर निर्देशित पारस्परिक प्रभाव है।"

विद्यालयों (किसी भी संगठन) में काम करने वाले लोग, अपने स्वभाव एवं प्रेरणा के आधार पर, अपने नेता (प्रधानाचार्य) से दो प्रकार से जुड़े होते हैं। पहला समूह ऐसे व्यक्तियों का होता है, जो सामान्य रूप से निर्देशित होना चाहता है तथा स्वयं उत्तरदायित्व से बचने का प्रयास करता है। वह स्वयं के हित एवं सुरक्षा को विद्यालय (संगठन) के हित से अधिक महत्व देता है। दूसरा समूह ऐसे व्यक्तियों का होता है, जो स्वयं निर्देशित एवं रचनात्मक व्यवहार प्रदर्शित करता है, वह अपने संस्थान के हित को ज़्यादा महत्व देता है (मैकग्रेगर, 1960)। अब संगठन (विद्यालय) के नेतृत्वकर्ता (प्रधानाचार्य) के सामने दोनों समूह के लोगों का सदुपयोग करने की समस्या आती है, क्योंकि दोनों ही समूह के लोग उसकी टीम के अनिवार्य सदस्य होते हैं। ऐसी स्थिति में प्रधानाचार्य अपने नेतृत्व-कौशलों का प्रयोग करते हुए प्रत्यायोजन द्वारा अलग-अलग सदस्य को अलग-अलग (रुचि और आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए) दायित्व सौंपता है। जैसा कि तोमर (2016) ने बताया है कि, "विद्यालय की कार्य-प्रणाली में प्रधानाचार्य अकेले समस्त कार्यों का निष्पादन नहीं करता है बल्कि वह अध्यापकों एवं अन्य कर्मचारियों का सहयोग भी लेता है। कार्य की अधिकता को ध्यान में रखते हुए प्रधानाचार्य अपने अधिकारों एवं उत्तरदायित्वों का प्रत्यायोजन (भारार्पण) भी करता है। इसके लिए वह स्वतंत्र प्रभारी (अध्यापकों को) बना देते हैं।"

प्रधानाचार्य समस्त (शैक्षणिक एवं गैर शैक्षणिक) स्टाफ़ में अपने प्रभावशाली नेतृत्व के आधार पर, उनकी मनोवृत्ति में स्थायी रूप से सकारात्मक परिवर्तन लाने का प्रयास करता है तथा उन्हें संस्था के लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु प्रभावित करता है। अध्यापक-वृन्द और कार्यालय स्टाफ़ के मध्य समूह भावना पैदा करने के लिए प्रधानाचार्य का एक अच्छा नेता होना नितांत आवश्यक है, क्योंकि बिना प्रभावशाली व्यक्तित्व के न तो वह मानव संसाधनों के मध्य समूह भावना पैदा कर पाएगा और न ही विद्यालय के लिए निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति कर सकेगा। अतः आवश्यक है कि प्रधानाचार्य अपने नेतृत्व-कौशल से समस्त मानवीय संसाधनों में भावना पैदा करते हुए अपने विद्यालय के लिए निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु, उन्हें अभिप्रेरित करे।

प्रधानाचार्य—मानवीय एवं गैर-मानवीय संसाधनों का मुख्य प्रबंधकर्ता

प्रधानाचार्य, विद्यालय के लिए आवश्यक मानवीय एवं गैर-मानवीय संसाधनों का प्रबंधन करता है। "पूर्व निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए मानवीय तथा अन्य संसाधनों का उपयोग करने की सुनिश्चित प्रक्रिया ही प्रबंध है। प्रबंध एक उद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया है" (जार्ज आर. टेरी, 1954)। प्रधानाचार्य, विद्यालय के लिए आवश्यक भौतिक, तकनीकी, वित्त एवं मानवीय संसाधनों और शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया, पाठ्यक्रम, खेल एवं अन्य आवश्यक साधनों की उपलब्धता सुनिश्चित करता है तथा उच्चतम शैक्षणिक

© NCERT not to be republished

उपलब्धि हेतु, कैसे इनका सदुपयोग करें?—इसके लिए वह सभी (भौतिक, तकनीकी, वित्त, सैद्धांतिक और मानवीय) संसाधनों का न केवल प्रबंध करता है, बल्कि उनमें सामंजस्य और समन्वय भी स्थापित करता है। जैसा कि राय और सुखिया (2017) ने रॉबिंसन को उद्धृत करते हुए लिखा है कि, "कोई भी संस्था या व्यवसाय स्वयंमेव नहीं चल सकते, चाहे वह संवेग (गतिशील) की स्थिति में ही क्यों न हो। उनको चलाने के लिए उद्दीपन की आवश्यकता होती है। जिस तरह मानव देह मस्तिष्क के अभाव में हाड़-मांस का एक लोथड़ा मात्र होता है, उसी प्रकार प्रबंध के अभाव में सभी साधन भी निष्क्रिय होते हैं।" शोधार्थी ने प्रधानाचार्य के प्रबंधन दायित्व को नीचे दिए गए चार्ट के माध्यम से अभिव्यक्त किया है।

वर्तमान में विद्यालय प्रबंधन का महत्व जैसे-जैसे बढ़ता जा रहा है, वैसे-वैसे प्रधानाचार्य की प्रबंधकीय भूमिका भी अत्यधिक महत्वपूर्ण होती जा रही है। विचारणीय है कि भले ही हम एक बहुत अच्छी योजना बना लें तथा आवश्यक संसाधन भी जुटा लें, लेकिन यदि प्रबंधन श्रेष्ठतम ढंग से नहीं किया गया तो विद्यालय अपने निर्धारित लक्ष्यों को हासिल नहीं कर सकेगा।

प्रधानाचार्य—एक समन्वयकर्ता

प्रधानाचार्य से यह अपेक्षा होती है कि वह विद्यालय में उपस्थित समस्त मानवीय संसाधनों में इस प्रकार समन्वय स्थापित करे कि विद्यार्थियों के शिक्षण-अधिगम हित में उनका श्रेष्ठ उपयोग किया जा सके। उसे अपने द्वारा बनाई गई योजना में समय-समय पर परिमार्जन भी करना चाहिए। उपस्थित संसाधनों का दैनंदिन आवश्यकता के अनुसार उपयोग करना सुनिश्चित करे, जिससे कि विद्यालय का दैनंदिन कार्यक्रम सुचारु ढंग से संपादित होता रहे तथा विद्यार्थियों का शिक्षण-अधिगम भी प्रभावशाली हो। इससे विद्यार्थियों को अपने अधिगम में विद्यालय का पूर्ण सहयोग मिलता है। प्रधानाचार्य का सबसे महत्वपूर्ण कार्य समन्वयन करना होता है। वह न केवल मानवीय संसाधनों में समन्वय स्थापित करता है, बल्कि वह गैर-मानवीय संसाधनों का सामंजस्यपूर्ण समुचित सदुपयोग भी करता है, जिससे वह अपने विद्यालय के निर्धारित लक्ष्यों को सफलतापूर्वक प्राप्त कर लेता है। प्रधानाचार्य के सामने एक सबसे बड़ा सवाल यह होता है कि वह विद्यालयों के संस्थागत लक्ष्यों तथा उसमें कार्य करने वाले मानवीय संसाधनों के व्यक्तिगत लक्ष्यों

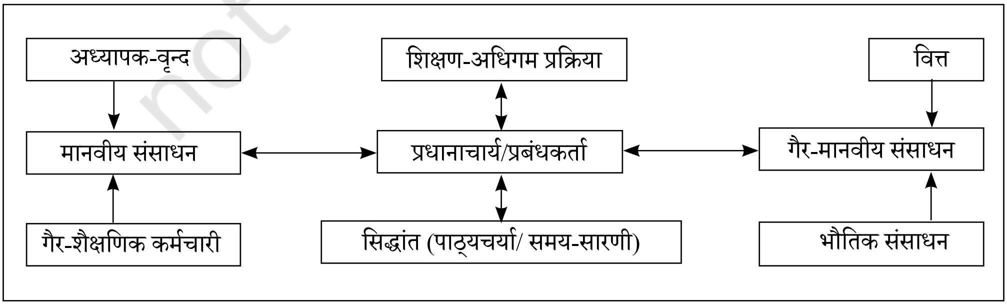

प्रधानाचार्य—प्रबंधकर्ता दायित्व-चार्ट

© NCERT not to be republished

में सामंजस्य कैसे पैदा करे, ताकि मानवीय संसाधन संस्थागत लक्ष्यों की प्राप्ति में अपना संपूर्ण योगदान दे सकें।

प्रधानाचार्य—शिक्षण-अधिगम एवं अन्य दैनंदिन क्रियाकलाप का पर्यवेक्षक

एक कुशल प्रधानाचार्य अपने दैनंदिन विद्यालयी आवश्यकताओं को पूरा करता है। वह यह सुनिश्चित करता है कि समस्त दैनंदिन क्रियाकलाप व्यवस्थित ढंग से संचालित हों। इसके लिए वह विभिन्न दैनंदिन क्रियाकलापों का पर्यवेक्षण करता है तथा एक पर्यवेक्षक की भूमिका का भी बखूबी निर्वहन करता है। वास्तव में, स्ववित्त पोषित विद्यालयों में प्रधानाचार्य, एक आतंरिक पर्यवेक्षक के रूप में विद्यालय में संचालित शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया, शिक्षक-विद्यार्थी व्यवहार, पाठ्यक्रम, अनुशासन, विद्यालय की सामाजिक-आर्थिक स्थिति, भौतिक संसाधनों की प्रभावी उपयोगिता, शैक्षिक वातावरण एवं विभिन्न पाठ्य सहगामी क्रियाकलापों का निरीक्षण करता है। "पर्यवेक्षण एक व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह को निर्देशित करने की क्रिया या प्रक्रिया है" (*योर डिक्शनरी*)। पर्यवेक्षण एक सुधारात्मक जाँच प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से प्रधानाचार्य चलायमान प्रक्रिया का अवलोकन करके सुधार हेतु आवश्यक सुझाव देता है। प्रधानाचार्य के पर्यवेक्षक की भूमिका हेतु आवश्यक क्रियाओं का वर्णन मेहता (2015) ने इस प्रकार किया है—कार्य के दौरान कर्मचारियों की क्रियाओं पर ध्यान देना, मानव प्रतिभाओं का बुद्धिमत्तापूर्ण उपयोग करना, उच्च उपलब्धि हेतु कर्मचारियों को प्रेरित करना, अच्छे मानवीय संबंधों को बनाए रखना, व्यावसायिक उन्नति हेतु प्रेरणा प्रदान करना तथा आवश्यक सुधार हेतु मूल्यांकन करना।

प्रधानाचार्य पर्यवेक्षक के रूप में विद्यार्थियों को उचित व्यावसायिक निर्देशन एवं परामर्श उपलब्ध कराता है तथा प्रभावी शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया का भी विकास करता है, जिससे विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास सुनिश्चित हो पाता है। वास्तविकता यह है कि, "पर्यवेक्षण उत्तम शिक्षण अधिगम परिस्थिति के विकास में सहायता देता है" (किंबल, 1975)।

प्रधानाचार्य पर्यवेक्षक के रूप में अति विशिष्ट भूमिका का निर्वहन करता है, जिसका मुख्य उद्देश्य विद्यालय के कर्मचारी, अध्यापक-वृन्द आदि के क्रियाकलापों एवं कार्यप्रणाली को उन्नत बनाने के लिए आवश्यकतानुसार महत्वपूर्ण सहायता देना होता है। वास्तव में, प्रधानाचार्य पर्यवेक्षक के रूप में आवश्यक रचनात्मक सुझाव एवं निर्देश भी देते हैं।

प्रधानाचार्य—विद्यालयी संगठन का प्रतिनिधित्वकर्ता

विद्यालय समाज का लघु रूप होता है। विद्यालय में विभिन्न धर्म और जाति के विद्यार्थी अध्ययन हेतु आते हैं। इस लिहाज़ से विद्यालय की सबसे महत्वपूर्ण ज़िम्मेदारी यह होती है कि वह विद्यालय के समस्त विद्यार्थियों को सामाजिक आवश्यकता के अनुरूप तैयार करे ताकि विद्यालय से निकलने के बाद समस्त विद्यार्थी सभी धर्मों को समान महत्व देते हुए एक श्रेष्ठ सामाजिक नागरिक की तरह समाज के अनुकूल व्यवहार करें। समाज में व्याप्त कुरीतियों, अंधविश्वासों तथा अवांछनीय तत्वों से मुक्ति हेतु सार्थक प्रयास करें। लेकिन यह तभी संभव होगा, जब विद्यालय में विद्यार्थियों के साथ अपनत्व और स्नेहपूर्वक व्यवहार किया जाए। विचारणीय है कि ऐसी स्थिति में विद्यालय का मुखिया होने के नाते

© NCERT not to be republished

प्रधानाचार्य विद्यालय में पारिवारिक वातावरण जैसा माहौल सृजित करें, जहाँ विद्यार्थी अपनी कक्षा के अन्य सभी विद्यार्थियों के साथ खुशी-खुशी रहते हुए शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया की सहायता से अपने ज्ञान का निर्माण करें तथा अध्यापक इस प्रक्रिया में उनकी सहायता करें व मार्गदर्शन प्रदान करें। प्रधानाचार्य की एक ज़िम्मेदारी यह भी होती है कि वह विभिन्न प्रकार के सामाजिक कार्यक्रमों, सभाओं-संगोष्ठियों में विद्यालय का प्रतिनिधित्व करे। बाह्य समाज, जिसका लघु रूप उनका विद्यालय स्वयं है, को अवगत कराएँ कि वे किस तरह अपने विद्यालय के माध्यम से समाज के लिए अति महत्वपूर्ण कार्य कर रहे हैं अर्थात् विद्यालय समाज का ही है और वह समाज के हित में ही श्रेष्ठ नागरिकों का निर्माण कर रहे हैं। इस प्रकार प्रधानाचार्य विद्यालय के विज़न को भी बाह्य समाज तक पहुँचा सकते हैं, जिससे विद्यालय अपने दीर्घकालीन लक्ष्यों की प्राप्ति की ओर मज़बूती से अपने कदम बढ़ाएगा।

अन्य विद्यालयों के समान स्ववित्त पोषित उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाचार्यों से भी यह अपेक्षा रहती है कि वे अपने विद्यालय के प्रतिनिधि के रूप में विद्यालय की खूबियों से बाह्य समाज एवं अभिभावकों को परिचित कराएँ, ताकि समाज और विद्यालय दोनों को लाभ हो सके। वे विद्यालय के साथ-साथ समाज को भी नेतृत्व प्रदान करने वाले व्यक्ति की भूमिका में होते हैं। विद्यालय को सामाजिक स्वरूप प्रदान करते हैं तथा सामाजिक माँग के अनुरूप विद्यालय में वास्तविक परिवर्तन लाते हैं। इस तरह वे विद्यालय को सर्वोच्च शिखर तक पहुँचाने का सफल प्रयास करते हैं।

प्रधानाचार्य — समस्त विद्यालयी क्रियाकलाप का मूल्यांकनकर्ता

किसी भी संगठन के सफल होने या न होने के पीछे उसके नेता का सबसे बड़ा योगदान होता है। यह बात विद्यालय पर भी अक्षरशः लागू होती है। जिस प्रकार संगठन का नेता अपने संगठन की कार्यप्रणाली का लगातार मूल्यांकन करता रहता है, ठीक उसी प्रकार एक सफल प्रधानाचार्य, जो कि विद्यालय के दैनंदिन क्रियाकलापों का मूल्यांकनकर्ता भी होता है, अपने विद्यालयी संगठन की कार्य-पद्धति का मूल्यांकन करता रहता है और आवश्यक सुधारात्मक कदम उठाता रहता है। इसका लाभ यह है कि विद्यालय की कुल गुणवत्ता में लगातार इज़ाफ़ा होता रहता है।

वास्तव में, शैक्षिक मूल्यांकन जाँचने-परखने की प्रक्रिया है, जिससे खामियाँ उजागर होती हैं; कमज़ोर पक्ष और मज़बूत पक्ष की जानकारी प्राप्त होती है। कुल मिलाकर इससे विद्यालय की वास्तविक स्थिति का पता चलता है। मूल्यांकन के आधार पर प्रधानाचार्य यह सुनिश्चित करते हैं कि हमें किस पक्ष पर कितना अधिक ध्यान देना है और किस पक्ष को पूर्ववत जारी रखना है। इससे विद्यालय की शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया अधिक प्रभावशाली हो जाती है और विद्यालय लगातार अपने शैक्षणिक उद्देश्यों को पूरा करता जाता है। वहीं उपर्युक्त समस्त पक्षों के उपयुक्त समन्वयन में होने वाली छोटी-सी त्रुटि भी विद्यालय के उद्देश्यों की प्राप्ति की प्रक्रिया को विफल कर सकती है।

निष्कर्ष

उपरोक्त समस्त विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि शैक्षिक प्रशासन और प्रबंधन के लिए उच्चतर

© NCERT not to be republished

माध्यमिक विद्यालयी स्तर पर प्रधानाचार्य बहुत महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है। प्रधानाचार्य समस्त विद्यालयी क्रियाकलापों का आयोजक-व्यवस्थापक होता है। सभी कार्यक्रम उसी के निर्देशन में सफलतापूर्वक संपन्न होते हैं। वह अपने दैनंदिन विद्यालयी जीवन में विभिन्न भूमिकाओं यथा — शैक्षिक नियोजक, प्रबंधकर्ता, समन्वयक, नेतृत्वकर्ता, पर्यवेक्षक, प्रतिनिधित्वकर्ता और मूल्यांकनकर्ता का निर्वहन करता है। प्रधानाचार्य की दैनिक कार्य-पद्धति में उक्त सभी भूमिकाओं को अलग-अलग देख पाना बहुत दुरुह कार्य है। क्योंकि ये सभी कार्य एक-दूसरे से काफ़ी घनिष्ठता के साथ जुड़े होते हैं। कभी-कभी तो ऐसी परिस्थिति आ जाती है कि उससे निपटने हेतु सभी कौशलों और भूमिकाओं का एक साथ प्रयोग करना पड़ता है। फिर भी यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि बहुत-से प्रधानाचार्य विभिन्न अवरोधों-कठिनाइयों के बावजूद अपनी विभिन्न भूमिकाओं को बखूबी अंजाम देते हुए अपने-अपने विद्यालयों को शिखर तक पहुँचा रहे हैं।

संदर्भ

एच., कुन्त्जु और सी.ओ. डोनेल. 1959. एन एनालिसिस ऑफ़ मेनेजिरियल फ़ंक्शंस. *प्रिंसिपल्स ऑफ़ मैनेजमेंट (दूसरा संस्करण)*. मैकग्रा-हिल सीरीज़ इन मैनेजमेंट XII. पृ. 718, 54/6. लंदन, न्यूयॉर्क, टोरोंटो, मैकग्रा-हिल बुक कंपनी.

जार्ज आर. टेरी. 1954. *प्रिंसिपल्स ऑफ मैनेजमेंट (द इरविन सीरीज़ इन इंडस्ट्रीयल इंजीनियरिंग एंड मैनेजमेंट)*. आर. डी. इरविन.

टेननबाम, रॉबर्ट. 1959. सम करेंट इश्यूज़ इन ह्यूमन रिलेशंस. *कैलिफोर्निया मैनेजमेंट रिव्यू*. 2(1) पृ. 49–58.

तोमर, जी. एस. 2016. *शैक्षिक प्रशासन एवं प्रबंधन*. आर. लाल बुक डिपो, मेरठ.

भटनागर, आर. पी. और वी. अग्रवाल. 1988. *शैक्षिक प्रशासन*. लॉयल बुक डिपो, मेरठ.

मल्दर, पी. 2012. *सिचुएशनल लीडरशिप मॉडल* (SLM). 22 अप्रैल, 2019 को https://www.toolshero.com/leadership/situational-leadership-hersey-blanchard/ से लिया गया है.

मेहता, दी. 2015. *शैक्षिक प्रबंधन*. पी. एच. आई. लर्निंग प्रा. लि., दिल्ली.

मैकग्रेगर, डी. 1960. द *ह्यूमन साइड ऑफ़ एंटरप्राइज़*. मैकग्रा-हिल, न्यूयार्क.

राय, एम. और एस. पी. सुखिया. 2017. *शैक्षिक प्रशासन, प्रबंधन, पर्यावरण एवं स्वच्छता*. अग्रवाल पब्लिकेशंस, आगरा.

योअर डिक्शनरी. www.yourdictionary.com से लिया गया है.

लाल, आर. बी. और के. कान्त. 2013. *भारतीय शिक्षा का इतिहास — विकास एवं समस्याएँ*. आर. लाल बुक डिपो, मेरठ.

वर्मा, एल. एन. और पी. दोसी. 2013. *भारतीय शिक्षा व्यवस्था एवं प्रशासन तंत्र*. राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर

वर्मा, जे. पी. 2013. *शैक्षिक प्रबंधन*. राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर.

सकलडीहा–1. www.pssakaldiha.in से लिया गया है.

सिंह, जी. और ए. के. राय. 2015. *शिक्षा प्रशासन एवं प्रबंधन*. मेरठ. पृ. 26–178. आर. लाल बुक डिपो, मेरठ.

www.mycoaching.in

© NCERT not to be republished